International Journal of Multidisciplinary Horizon

ISSN: **3049-2017**
IJMH 2025; 2(6): 90-91
© 2025 IJMH
www.themultijournal.com
Received: 15-11-2025
Accepted: 13-12-2025
Publish : 15-12-2025

डॉ. भावना झाला
सहायक आचार्य, दृश्य कला विभाग,
भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय,
उदयपुर

Correspondence:
डॉ. भावना झाला
सहायक आचार्य, दृश्य कला विभाग,
भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय,
उदयपुर

राजस्थानी लघुचित्र शैली : एक अध्ययन

डॉ. भावना झाला

मानव मन ने अपनी अनुभूतियों को विविध माध्यमों के माध्यम से अभिव्यक्त करने का प्रयास आदिकाल से किया है। इन माध्यमों में चित्रकला भी एक विशेश माध्यम रहा है। प्रारंभ में पत्थरों पर अनेक आकृतियों का निर्माण किया जाता था। समय के साथ-साथ संसाधनों के उपलब्ध होने के साथ अनेक रंगों के माध्यम से आकृतियों की रचना की जाने लगी। कालांतर में कला स्वरूप में विकास होता गया और इस कला ने अपने नये-नये आयाम स्थापित करना प्रारंभ किया। विश्व के अनेक देशों में चित्रकला की अनेक शैलियों का विकास हुआ। हर शैली अपनी विशिश्टता लिए हुए है। भारत के संदर्भ में ही बात करें तो यहां अलग-अलग प्रदेश की अपनी चित्रकला शैलियां हैं। लोकचित्र कला के साथ अन्य शैलियों का विकास भी देखने को मिलता है।

भारतवर्ष में अति प्राचीनकाल में चित्रकला का विकास हो चुका था। सिन्धु सभ्यता में प्रस्तर खण्डों पर जो चित्रकारी हुई, वह लगभग पाँच हजार वर्ष का इतिहास है। वेदों के समय भी चित्रों का चलन था। अजन्ता की गुफाओं की चित्रकला को देखकर लगता है कि उस समय में चित्रकला अपनी चरम अवस्था पर थी। मुगलों के काल में तो चित्रकला लगभग प्रायः लुप्त हो गयी थी। आगे चलकर इस्लाम में अब उदारता आई तो मुस्लिम समाज कला की ओर बढ़ने लगा। चित्रकला की अनवरत धारा फिर फूट पड़ी और उसने मानव मन को सींच-सींच कर हरा-भरा कर दिया। मुगलीय दरबार या कहे मुगल शैली के कलाकार इधर-उधर भटकने लगे। अपना और अपने परिवार का पेट भरने के लिए भटकते रहे। यही वह समय था जब इन भटके हुये कलाकारों को मरूभूमि के रजवाड़े राजाओं ने इन्हें अपनी शरण दी जिसका परिणाम हमारी मरूप्रदेश की भूमि पर कला का विकास प्रारम्भ हुआ।

राजस्थान अपनी विशेश चित्रकला शैलियों के लिए जाना जाता है। इस शैली में एक शैली है लघुचित्र शैली जिसे अंग्रेजी में मिनिएचर आर्ट भी कहा जाता है। राजस्थानी लघुचित्र शैली का कलात्मक वैभव अद्वितीय रहा है। चित्रकला के इतिहास की शृंखला में अजन्ता की परम्परा को निभाने वाली राजस्थानी चित्र शैली का अपना निजी सांस्कृतिक परिवेश व इतिहास रहा है।

राजस्थानी शैली की उन्नति राजपूत शासकों के राज्य की उन्नति के साथ-साथ होती रही। कलाप्रेमी राजपूत राजाओं का राजस्थानी चित्र शैली के विकास तथा संवर्धन में विशेष योगदान रहा है। अतः प्राचीन चित्रकला शैली की अजस्रधारा अनेक रियासतों की शैलियों को परिप्लावित करती हुई अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँच गयी।

अपनी पुस्तक 'भारतीय चित्रकला' के अन्तर्गत प्रसिद्ध कला समालोचक वाचस्पति गैरोला ने लिखा है, 'भारतीय चित्रकला के इतिहास में राजस्थान के कलाकारों की देन सर्वथा अतुलनीय है।

वास्तविकता तो यह है कि अपने प्राकृतिक निर्माण और मोहक वातावरण के कारण कला और काव्य की उद्भावना के लिए राजस्थान की धरती बड़ी ही उपयुक्त रही है। आज हम जिसको राजस्थान या राजपूत शैली के नाम से पुकारते हैं उसका निर्माण, दूसरी अधिकांश चित्र शैलियों की भाँति, न तो एक स्थान में हुआ और न ही उसके निर्माता कलाकार उंगलियों पर गिने जा सकते हैं। राजस्थान के जितने भी प्राचीन नगर और धार्मिक-सांस्कृतिक स्थल हैं, उन सभी में एक साथ असंख्य आश्रित कलाकारों एवं स्वतंत्र कलाकारों के द्वारा वर्षों तक निरन्तर कलाकृतियों का सृजन होता रहा है।'[1]

15वीं शती में गुजरात में जैन शैली पूरे चरमोत्कर्ष पर थी। निकटवर्ती क्षेत्र होने के कारण मेवाड़ में जो चित्र शैली पनपी उनमें जैन शैली की पूरी छाप थी। अतः 16वीं शती मेवाड़ में चित्रकला का विकास हो चुका था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राजस्थानी चित्रकला का विकास लगभग 1550-1900 ई. तक रहा है।

यहाँ यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि राजस्थानी और मुगल कलम साथ-साथ पल्लवित होते हुए भी अपने आप में अपनी निजता लिए हुए है। मुगल कला और राजपूत शैली में विशेष अन्तर यह भी है कि जहाँ मुगल बादशाहों ने अपने विलासितापूर्ण जीवन के आनन्द को उल्लास और भोग विलास के साथ व्यतीत किया है, का रूप हम उनके कलाकर्म में पाते हैं। अतः मुगल कला राजदरबार से संबंधित विषयों तक सीमित रही जबकि इसके विपरीत राजपूत शैली में कलाकारों ने अपनी धार्मिकता और जीवन की अनन्त साधना को अपना विषय मानकर चित्रांकित किया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि मुगल शैली उसकी शारीरिक संरचना थी तो राजस्थानी शैली उस संरचना की आत्माभिव्यक्ति, जिसका कोई आकार-प्रकार नहीं है।

'मध्यकाल में शैव धर्म के उपरान्त वैष्णव धर्म का उत्थान प्रसार पाने लगा। 13वीं शती से अपनी माधुर्य भावना के कारण कृष्ण भक्ति आन्दोलन का सर्वोपरि स्थान रहा है जिससे मरुप्रदेश अछूता नहीं रहा है। यहाँ 'श्रीमद्भागवत' एवं 12वीं शती में जयदेव कवि द्वारा रचित 'गीतगोविन्द' ने सचित्र ग्रन्थों की परम्परा को नवीन मोड़ दिया है। इसके अतिरिक्त चण्डीदास, विद्यापति, सूरदास तथा मीराकृत काव्य रचनाओं से प्रेरणा पाकर भी चित्रण कार्य किया गया।'[2]

राजस्थान में जहाँ ईश्वरीय आराध्य दिव्यशक्ति का चित्रण देखने को मिलता है, वहीं राजस्थान की आमोद-प्रमोद, त्योहार, लोक संस्कृति एवं घटना प्रकरणों का भी चित्रण दृष्टिगत होता है। यहाँ दिव्य शक्तियों के साथ-साथ प्रेम के सूचक भगवान श्रीकृष्ण जीवन के विविध रूप हमें चित्रांकन में देखने को मिलते हैं।

राजस्थान में अलग-अलग रियासतों में अलग-अलग शैलियाँ पनपी और विकसित हुई है और उसी नाम से प्रसिद्धि भी अर्जित की है। मुगलों द्वारा निष्कासित कलाकार जिस राज्याश्रय में रहे वे अपनी कला का पूर्ण निखार उसी शैली में करते रहे। राजस्थान में उदयपुर, नाथद्वारा, जयपुर, कोटा-बूंदी, किशनगढ़, अलवर, जोधपुर, बीकानेर आदि शैलियाँ रियासती शैलियों के रूप में आज भी विश्व स्तर पर अपना अस्तित्व बनाए रखे हुए है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. वाचस्पति गैरोला : भारतीय चित्रकला, इण्डियन प्रेस कैम्पस, इलाहबाद, 1963, पृ. 157
2. जयसिंह नीरज : राजस्थानी चित्रकला, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2009, पृ. 26